॥ श्री श्री लक्ष्मीनारायणाय नमः ॥

श्री अग्रसेनजी की जीवनी

—अर्थात्—

श्री अग्रवाल जाति की उत्पत्ति

❀

रचयिता :—

अग्रवाल

प्रकाशक—

अग्रसेन सेवा समिति

❀

मिलने का पता—

अग्रसेन स्मृति भवन

P. 30/A कलाकार स्ट्रीट, कलकत्ता-७

मिती आश्विन, शुक्ला १

संवत् २०२२ : 1965 ई.

प्रेमसे पढ़ो और श्री अग्रसेनजीकी प्रतिज्ञाका पालन करो।

श्री १००८ अग्रसेन जी महाराज

"अग्रवाल भाइयों से दो शब्द"

श्री अग्रसेन जयन्ती के शुभ अवसर पर हमलोगों की यह इच्छा हुई कि महाराज श्री अग्रसेनजी की जीवनी का परिचय सब भाइयों को होना चाहिये। इस उद्देश्य से अन्य पुस्तकों से सहायता लेकर सब भाइयों के सामने महाराज की जीवनी तथा अग्रवाल जाति का वर्णन आप महानुभावों की सेवा में टूटी-फूटी भाषा में अर्पित किया जाता है। साथ ही साथ सब भाइयों से यह अनुरोध है कि महाराज की जीवनी के सम्बन्ध में यदि कोई भाई विशेष जानकारी रखते हों तो वे कृपा कर के उपरोक्त पते पर भेजें।

अग्रसेन सेवा समिति।

श्री अग्रसेन जी की जीवनी

अर्थात्

श्री अग्रवाल जाति की उत्पत्ति

श्री अग्रसेन जी पूज्य हमारे, जिनसे वंश विस्तार हुआ।
भूले हुए थे उनको हम, जिनसे जाति का उत्थान हुआ॥१॥
जिसको न निज गौरव तथा, निज जाति का अभिमान है।
वह नर नहीं पशु तुल्य है, जीवित ही मृतक समान है॥२॥

श्री अग्रसेन जी की उत्पत्ति, भगवान शिवजीका वरदान

श्री अग्रसेन जी वैश्य कुल में उत्पन्न हुए थे। उनके पिता का नाम देवल बल्लभ था। वे वैश्य होते हुए भी क्षत्रिय धर्म का पालन करते थे। उनकी एक बहन थी जिसका नाम सत्यवती था। अग्रसेन जी के पिता "देवासुर संग्राम" में देवताओं के सहायतार्थ इन्द्रलोक में चले गये। श्री अग्रसेन जी ने अपने मन में विचारा कि मैं शिवजी की तपस्या करके ऐसा वरदान प्राप्त करूँ, जिससे मेरी सन्तान खूब बढ़े, धन से परिपूर्ण हो, और महाप्रलय तक बनी रहे। अपनी बहिन सत्यवती को साथ लेकर वे भगवान शङ्कर की तपस्या करने लगे। बारह साल की

तपस्या पर शिवजी बहुत प्रसन्न हुए। अग्रसेन जी को उन्होंने तीन वरदान दिये।

प्रथम—सन्तान प्राप्ति।

द्वितीय—सन्तान की वृद्धि प्राप्ति पूर्वक, प्रलय काल तक स्थिति।

तृतीय—सन्तान धन-धान्य (ऐश्वर्य) परिपूर्ण हो।

भगवान शङ्कर ने श्री अग्रसेन जी को वरदान देकर, उनसे यह प्रतिज्ञा करवाई कि तुम्हारी सन्तानके पास लक्ष्मी (ऐश्वर्य) तब तक ही बनी रहेगी जब तक कि तुम्हारी सन्तान मांस एवं मदिरा पान नहीं करेगी। इसलिये सब भाइयों से अनुरोध है कि महाराज की प्रतिज्ञा का पालन करें।

श्री अग्रसेन जी का "अग्रोहा" नगर बसाना

श्री अग्रसेन जी गुजरात दक्षिण में रहा करते थे। उन्होंने शिवजी से जिस समय वरदान पाया, अपने निवास स्थान के लिये स्थान पूछा। शिवजी के कथनानुसार अपने नाम का "अग्रोहा" नामक एक नगर बसाया, जो पूर्वी पंजाब में हिसार के पास है।

श्री परशुराम जी का श्राप देना

श्री परशुराम जी ने अग्रसेन जी से पूछा कि तू वैश्य होकर क्षत्रिय धर्म पर क्यों चलता है? क्या तूने मेरा नाम नहीं सुना मैंने २१ बार पृथ्वी कोनिश्क्षत्रिय कर दिया है। तू अपना भला

चाहता है तो क्षत्रिय धर्म को छोड़ कर वैश्य धर्म पालन कर। श्री अग्रसेन जी ने श्री परशुराम जी से बहुत शान्त भाव से प्रार्थना की कि क्षत्रिय धर्म छोड़ देने से जंगल के भील लोग हमें नहीं रहने देंगे। उन्होंने कहा कि मैं क्षत्रिय धर्म छोड़ने में असमर्थ हूँ।

इस पर परशुरामजी ने क्रोधित होकर उनको यह श्राप दे दिया कि जब तक तू क्षत्रिय धर्म रखेगा तब तक तुझे सन्तान नहीं होगी।

भगवान श्री शंकर जी का स्वप्न में दर्शन देना

श्री परशुराम जी के श्राप से श्री अग्रसेन जी के दिल पर बहुत बुरा प्रभाव हुआ और सन्तान उत्पत्ति के लिये रात दिन चिन्ता में रहने लगे। वे शिवजी का ध्यान करने लगे। एक दिन रात्रि को श्री शिवजी ने अग्रसेन जी को स्वप्न में आकर कहा कि तुम सन्तान के लिये क्यों सन्ताप करते हो? उत्तर दिशा में श्री नाग देवता के माधवी नाम की कन्या है, उसके साथ विवाह करो और श्री विश्वामित्र ऋषि जहाँ तपस्या करते हैं उनके पास जाकर सन्तान उत्पत्ति के लिये वरदान प्राप्त करो।

श्री अग्रसेनजी का नाग कन्या माधवी से विवाह करना

सवेरे उठ कर अग्रसेन जी अपने मन्त्री को राज्य का भार सौंप कर घोड़े पर सवार होकर उत्तर दिशा को चल दिये।

नाग देवता के यहाँ पहुंच कर उन्होंने माधवी के साथ विवाह कर लेने की इच्छा प्रगट की। नाग देवता ने कहा कि मैंने अपनी पुत्री का विवाह इन्द्र देवता के साथ करना निश्चित कर लिया है। इसलिये तुम्हारे साथ मेरी पुत्री का विवाह नहीं कर सकता। श्री अग्रसेन जी ने कहा कि अगर उनके साथ विवाह नहीं हुआ तो वे बलपूर्वक माधवी के साथ विवाह कर लेंगे। इसी बात पर आपस में युद्ध हो गया। आखिर में श्री अग्रसेन जी की विजय हो गई और माधवी का विवाह श्री अग्रसेनजी के साथ हो गया।

श्री अग्रसेनजी का तपस्या करना और श्री विश्वामित्र ऋषि से वरदान प्राप्त करना

माधवी के साथ विवाह हो जाने पर, श्री अग्रसेनजी और श्री माधवी जी, मुनि विश्वामित्र के स्थान पर गये जहाँ श्री विश्वामित्रजी समाधि लगाये बैठे थे। उन्होंने भी चुपचाप उनके पास बैठकर समाधि लगा ली। पश्चात् श्री विश्वामित्र जी की समाधि १२ वर्ष पूर्ण होने पर खुली और देखा कि दो मनुष्यों के कलेवर पड़े हैं। उन पर उन्होंने जल छिड़का जिससे वे चैतन्य हो गये। विश्वामित्र ऋषि ने अग्रसेन जी से वर मांगने को कहा। श्री अग्रसेन जी ने कहा कि महाराज वचन दिजिये। तब ऋषिराज ने वचन दिया। महाराज अग्रसेन जी ने दो वरदान मांगे। पहला सन्तान होना मांगा जिससे

उनका वंश चले, दूसरा वे उनके गुरु बनें। श्री विश्वामित्र ऋषि ने कहा—तथास्तु, यानी ऐसा ही हो। लेकिन वरदान देने के बाद ऋषि जी ने अपने योगबल से देखा कि परशुरामजी ने इनको श्राप दिया है इसलिये बिना क्षत्रिय धर्म छोड़े सन्तान नहीं हो सकती।

वैश्य धर्म धारण करना छत्र चँवर का वरदान

श्री विश्वामित्र ऋषि ने अग्रसेन जी से कहा कि हे राजन, तुम वैश्य धर्म धारण करोगे तब ही तुम्हारे सन्तान हो सकती है कारण तुम्हें मुनि का श्राप है। श्री अग्रसेन जी ने कहा कि हे गुरुदेव हमारे यहाँ जगल में जो भील लोग रहते हैं वे बड़ा उपद्रव करते हैं, इसलिये मैं क्षत्रिय धर्म नहीं छोड़ सकता। ऋषि जी ने कहा कि हे राजन! तुम अब क्यों डरते हो? मैं तुम्हारा गुरु बन गया हूँ तुम्हारी मदद के लिये तुम जिस समय मुझे याद करोगे मैं अऊँगा। इसलिये मेरे कहने से वैश्य धर्म धारण करके अपने वंश को चलाओ जिससे तुम अमर कीर्ति को प्राप्त होगे। श्री अग्रसेन जी ने उरु के वचन मान कर वैश्य धर्म धारण करना स्वीकार कर लिया लेकिन उन्होंने यह कहा कि हे गुरुदेव जो क्षत्रियों का निशान छत्र चँवर है उनको जब तक मेरी सन्तान रहे, तब तक मैं रखना चाहता हूँ। इस पर ऋषिजी ने प्रसन्न होकर कहा कि जब तक तुम्हारी सन्तान रहेगी तब तक यह राज्य चिन्ह छत्रचँवर उन पर बना रहेगा।

तभी से यह छत्र चँवर श्री अग्रसेन जी के सन्तानों के यहाँ चले आते हैं।

सन्तान उत्पत्ति

श्री अग्रसेनजी के दो रानियाँ थी। एक का नाम था ज्ञानवती और दूसरी का माधवी। माधवी के ६ पुत्र हुए जो सुन्दर श्रेष्ठ एवं सब गुण सम्पन्न थे। ज्ञानवती के एक पुत्र उमाशकर नाम का हुआ जो भगवान शङ्कर का भक्त था। महाराज ने उसे अपना पुरोहित बना लिया।

नागराज का अपनी १७ पुत्रियों का टीका भेजना

अहीपुर के बासुकी नागराज के सत्रह पुत्रियाँ थी। नागराज ने ४ ब्राह्मणों को बुलाकर यह कहा कि मेरी इन सत्रह पुत्रियों का टीका एक ही राजा के सत्रह पुत्रों के साथ कर आओ। यदि एक ही राजा के सत्रह पुत्र न हों तो टीका मत देना और मुझे मुँह मत दिखाना यह चारो ब्राह्मण सब जगह देश-देशान्तर घूम आये किन्तु एक ही राजा के सत्रह पुत्र कहीं भी नहीं मिले। आखिर वे निराश हो गये घूमते-घूमते अग्रोहा में श्री अग्रसेन जी के बगीचे में आ ठहरे और अपना सब वृत्तान्त बगीचे के माली से कह सुनाया और कहा कि अब हमलोग जीवित अग्नि में दग्ध हो जायंगे। माली घबड़ाया हुआ महाराज के पास गया और ब्राह्मणों का सारा हाल कह सुनाया। महाराज श्री अग्रसेन जी को यह वृतान्त

सुनकर बड़ा ही सन्ताप हुआ और अपने मन में सोचने लगे कि चार ब्राह्मणों की हत्या हमें लगेगी। इन ब्राह्मणों की हत्या कैसे टले? आखिर महाराज ने ब्राह्मणों को सान्त्वनापूर्ण वचन कहला भेजा और भोजन करने का इन्तजाम करवा दिया।

विष्णु भगवान की प्रार्थना द्वारा ८ पुत्रों की प्राप्ति

श्री अग्रसेन जी भगवान श्री विष्णु के मन्दिर में जाकर प्रार्थना करने लगे और कहने लगे कि हे भगवन् अब उन ब्राह्मणों की रक्षा करना और मेरे वचन को निभाना आप ही के हाथ है। मुझे आप आठ पुत्र और दीजिये नहीं तो मैं आप के चरणों में अभी अपनी जान न्योछावर करता हूँ। ज्योंही अग्रसेन जी म्यान से तलवार निकाल कर मरने को तैयार हुए कि आवाज हुई "क्यों मरता है? पीछे देख तेरे आठ पुत्र खड़े हैं।" ईश्वर की लीला बड़ी विचित्र है। अपने भक्तों की लाज भगवान हर समय रखते हैं।

१७ पुत्रों का टीका लेना

महाराज ने अपने सत्रह पुत्रों का टीका अहीपुर के वासुकी नागराज की सत्रह नाग कुमारियों से ले लिया और ब्राह्मणों को सन्तुष्ट करके विदा कर दिया। ब्राह्मणों ने महाराज को शुभ मुहूर्त्त में विवाह करने के लिए अहीपुर पधारने का अनुरोध किया। तत्पश्चात वे वापस चले गये।

महाराज श्री अग्रसेन जी के पुत्रों का विवाह

श्री अग्रसेन जी अपने सत्रह पुत्रों की बारात सजाकर अपने इष्ट मित्रों सहित अहीपुर नगरी के गौरवे पहुँचे तो नागराज ने श्री अग्रसेन जी को कहला भेजा कि मेरे एक पुत्री और उत्पन्न हो गयी है यदि आपके अठारह पुत्र हों तो मैं अपनी अठारह पुत्रियों के साथ विवाह कर दूँगा अन्यथा नहीं करूँगा। अग्रसेन जी यह सम्वाद सुनकर मन में बड़े दुःखी हुए और सोचने लगे कि अब एक पुत्र कहाँ से लाऊँ। महाराज विचार करते करते जगंल में निकल गये जहाँ एक पहाड़ की गुफा में एक महात्मा को तपस्या करते देखा। महात्मा ने पूछा कि तुम यहाँ कैसे आये। तब अग्रसेनजी ने सारा वृत्तान्त कह सुनाया और कहा कि मुझे एक पुत्र की और आवश्यकता है। यशराज (महात्मा) ने अपने योग बल से देखा तो मालूम हुआ कि यह मेरे मामा अग्रसेन जी हैं, इनके कष्ट को चलकर दूर करना चाहिये। यशराज ने बारात में पहुँचकर सबसे बड़े भाई "गर" को बुलाया। उन्होंने गर का एक हाथ अपने हाथ में और दूसरा हाथ अग्रसेनजी के हाथ में दे दिया और खींचा महात्मा की दया से वे एक से दो पुत्र हो गए। उनका नाम हुआ गर और गरसंहूण, जिसको आधा गोत्र कहते हैं। गर और गरसंहूण गोत्र वालों में परस्पर विवाह नहीं होता है। यशराज ने महाराज से अपना सब हाल बतला दिया तब

महाराज जान गए कि यह तो मेरी बहिन सत्यवती का लड़का है। महाराज ने यशराज को भी साथ में ले लिया।

तोरण पर चीड़ा लगना और छड़ा मारना

श्री अग्रसेनजी ने नागराज को कहला भेजा कि मेरे अठारह पुत्र हैं, जो आपकी अठारह पुत्रियों के साथ विवाह कर लेंगे। बारात ज्योंही विवाह मंडप के पास पहुँची एक दाना आकर खड़ा हो गया और कहने लगा कि नाग कन्या मेरी मांग है। इस पर आपस में युद्ध होने लगा। आखिर में दाना हार गया और गिड़गिड़ा कर कहने लगा कि मुझे मत मारिये। मैं आपको बहुत भारी सम्पत्ति दूँगा लेकिन आपको एक बात माननी पड़ेगी। आपके वंश में मेरी भी एक याददाश्त रहनी चाहिये। जब दुल्हा दुकाव करने आवे तब तोरन पर चीड़ा मोड़कर लगाना और चीड़ा पर छड़ा मारकर तब विवाह करना। तभी से अग्रवालों में तोरन के चीड़े पर छड़ा मारने का रिवाज चला आता है।

नाग चोला की याददाश्त में मामा चोला का विवाह में मर्यादा बनना

श्री अग्रसेन जी के अठारह पुत्रों का विवाह आनन्द पूर्वक हो गया और बासुकी नागराज ने खूब धन, जवाहरात, सोना, चांदी, गायें, दास, दासियाँ दहेज में दी और अपने अधीनस्थ राजाओं की अठारह पुत्रियां अपनी अठारह

नागकुमारियों की सेवा शुश्रुषा करने के लिए दी। नाग कुमारियाँ अपने नागचोला को पहन कर कभी कभी सर्पिणी के रूप में परिवर्तित हो जाया करती थी। इस बातको जानकर राजकुमार नागकुमारियों के पास नहीं जाते थे और जो अठारह राजकुमारियाँ थी उन्हीं के साथ आहार-विहार करने लगे और उन राजकुमारियों के सन्तान होने लगी। महाराज अग्रसेनजी अपने पुत्रों के द्वारा राजकुमारियों से सन्तान उत्पन्न होने से प्रसन्न नहीं थे। वे नागकुमारियों से सन्तान होकर वंश चले ऐसा उपाय ढूँढ़ने लगे। एक दिन महाराज ने ब्राह्मणों से यह परामर्श किया कि नागकुमारियाँ सर्पिणी नहीं बने, ऐसा उपाय बताइये। ब्राह्मणों ने बताया कि ये नागकुमारियाँ नागपंचमी को सर्पों की पूजा करने उनकी बम्बी पर जाती हैं उस समय नाग चोलों के पिटारों को यहीं छोड़ जायेंगी। उस समय उन नाग चोलोंको कोई आदमी उठाकर अग्नि में जीवित दग्ध हो जाय तो यह सर्पिणियाँ बनने से रुक सकती हैं।

नागपंचमी को नागकुमारियाँ जब सर्पों की पूजा करने गईं तो पीछे से उन नाग चोलों को महाराज ने यशराज द्वारा अग्नि में भस्म करा दिया। जब नागकुमारियाँ वापिस लौट कर आईं तो अपने नाग चोलों को न पाकर क्रोधित होने लगीं और श्राप देने लगी तो महाराज अग्रसेन जी ने उनको धैर्य देकर समझाया कि तुम्हारे नागचोलों को चुराने वाला जीवित चिता में दग्ध हो चुका है। अब वे नाग चोले

वापिस नहीं आ सकते। तुम लोग अब किसको श्राप देती हो। इसलिये तुम लोग शान्त रहो। नागकुमारियों को दुःख तो बहुत हुआ लेकिन क्या करती। आखिर अपने श्वसुर से वे बोलीं कि ये नाग चोले हमारे पिता के दिये हुए थे सो इन नाग चोलों की याददाश्त हमारे वंश में रखी जानी चाहिए। विवाह के मौके पर मामा की तरफ से यह रीति होनी चाहिए कि मामा अपनी भानजी को विवाह में फेरा कराने के लिये जब लाये तो नाग चोला की तरह कपड़ा पहना कर लाये जिससे हमारे पिता का नाम भी बना रहे और दूसरे जब विवाह में सिर गुंथी होवे तक पहले नागिनी की तरह चूँडी बनावे और दूल्हा उस पर भेंट चढ़ावे। यह दोनों बातें अग्रसेन जी ने मंजूर की और नागकुमारियाँ अपने अपने महलों में चली गई।

शिव पार्वती का वरदान

श्री अग्रसेन जी ने सोचा कि मेरी बहिन सत्यवती को मालूम होगा कि उसके पुत्र यशराज को अग्रसेन ने अपना वंश चलाने के लिये अग्नि में जीवित दग्ध करा दिया है तो वे यहां आकर मुझे श्राप देंगी। यशराज को जिन्दा करने के लिये महाराज शंकरजी की तपस्या में लग गये। उनकी तपस्या पर भगवान शङ्कर तथा माता पार्वती ने प्रसन्न होकर यशराज को जिन्दा कर दिया और भगवान श्री शङ्करजी ने श्री अग्रसेन

जी को एक गूदड़ी (गद्दी) प्रदान की और कहा कि इस गूदड़ी पर तेरी सन्तान बैठकर काम करेगी उसको बहुत लाभ होगा और इस पर बैठकर पाँचों अंगुलियों को नीचा करेगी यानी दान देगी, वह कभी किसी के आगे हाथ नहीं पसारेगी। श्री पार्वतीजी ने एक गल्ला की पेई प्रदान की और कहा कि यह पेई धन से भरी रहेगी, कभी खाली नहीं होगी। यह वर देकर भगवान शिवपार्वती अन्तर्धान हो गये। आज भी गद्दी को शिवजी की गद्दी कहते हैं। श्री अग्रसेनजी ने यशराज को अपना पूजनीय भाट बना लिया और अपनी सन्तान को यह आदेश दिया कि उनको प्रति जन १ पैसा प्रति वर्ष देगी।

थापे की पूजा

जब सत्यवती को यह मालूम हुआ कि तेरे लड़के को तेरे भाई ने अपना वंश चलाने के लिये जीवित अग्नि में दग्ध कर दिया है तो वह क्रोध में होकर अपने भाई के यहाँ आई। वहाँ अपने लड़के को सामने खड़ा देख और भाई द्वारा उसके बारे में सारा हाल सुन कर शान्त हो गई। सत्यवती ने अपने भाई से कहा कि तेरे वंश में मेरी पूजा होनी चाहिये। इसपर महाराज ने अपनी सन्तान को यह आदेश दिया कि विवाह आदि शुभ कार्यों में सत्यवती को कुल देवी मान कर पहले उसकी पूजा की जाये। यह नियम अब भी चला आ रहा है। विवाह में जिस समय वरदवीननी विवाह होने के बाद थापा

के आगे जाकर धोक खाते हैं, यह थापा श्री अग्रसेनजी की बहिन सत्यवती के नाम का ही है।

अग्रवाल जाति का कायम करना

श्री अग्रसेन जी के १८ पुत्रों के ३६ रानियाँ थी। १८ नाग कुमारियाँ और १८ राजकुमारियाँ थी। उनके ८१ लड़के और ७८ पुत्रियाँ हुई। श्री अग्रसेनजी ने विचारा कि तेरे पौत्र और पौत्रियों का विवाह किस के साथ किया जाये तथा वंश की वृद्धि कैसे हो। यह विचार कर अपने नाम की वैश्य अग्रवाल जाति कायम की और अपने ८१ पौत्र और ७८ पौत्रियों का विवाह आपस में सहोदर भाई के गोत्र को छोड़ कर करवा दिया और भविष्य में इसके लिये नियम बना दिया कि अग्रवालों का विवाह अग्रवाल जाति में ही किया जाये, दूसरी वैश्य जाति में नहीं किया जाय। यह नियम आजतक चला आ रहा है।

श्री अग्रसेन जी के १८ पुत्रों का नाम और १७॥ गोत्र

नाम	गोत्र
(१) गुलाब देव	(१) गर
(२) गैंद्रमल	(२) गोयल
(३) कर्णचन्द	(३) कच्छल
(४) मनीपाल	(४) मंगल
(५) बंद्रभान	(५) बिंदल
(६) ढावदेव	(६) ढालन

(७) सिधोतप	(७) सिंगल
(८) जैतगज	(८) जिंदल
(९) मत्र पति	(९) मिन्तल
(१०) तवोल	(१०) तुँगल
(११) कानचन्द	(११) कांसल
(१२) ताराचन्द	(१२) बायल
(१३) वीरभान	(१३) बाँसल
(१४) नारसेन	(१४) नागल
(१५) मधसेन	(१५) मुदकल
(१६) इन्द्रसेन	(१६) एरण
(१७) नगेन्द्र सेन	(१७) टैरन
(१८) गरसंहूण	(१७॥) गरसंहूण

श्री अग्रसेन जी का अपने पुत्रों को आदेश देना

(१) प्राणि मात्र का हित करना।
(२) परउपकारों में अपना तन मन धन लगाना।
(३) हर एक वर्ण को समान समझना।
(४) खेती द्वारा अन्न पैदा करना।
(५) वाणिज्य व्यापार करके सबको सुख पहुँचाना।
(६) गायों का पालन करके गौवंश की उन्नति करना।
(७) जो भाई कमजोर हो उसको सहायता देकर अपने बराबर बना लेना।
(८) जो भाई जन अपना काम करने लायक होकर जुदा

हो तब न्योता रूप में एक जोड़ा ईंट और एक मुद्रा उसको देकर बराबर का बना लेना।

(६) जिस भाई के पास जो पूँजी रहे उसका चार भाग करके पहला भाग गौ पालन दान आदि में लगाये, दूसरा व्यापार आदि में लगाये, तीसरा गृहस्थी के खर्चों में लगाये, चौथा भाग संचित करके रखे।

"अग्रोहा" नगर का वर्णन

श्री अग्रसेन जी की संतानें उनके आदेशानुसार कार्य और धर्म का पालन करते हुये चली आ रही थी। हजारों वर्ष पहिले की बात है कि अग्रोहा नगर की आबादी एक लाख घर की हो चुकी थी। अग्रोहा नगर इतना बड़ा हो गया था कि दस हजार घर नगर के बाहर की तरफ बेगारियों के थे। यह नगर धनधान्य से परिपूर्ण था। इसमें रहने वाले अग्रवाल भाइयों में परस्पर बहुत प्रेम था। जो कोई भाई कमजोर हालत में हो जाता अथवा समझदार होने पर अलग होता उनको महाराज श्री अग्रसेन जी के आदेशानुसार १ जोड़ा ईंटा (मकान बनाने के लिये) और १ मुद्रा (रुपया) की घर पीछे दिया जाता था, जिससे वे सब भाई आपस में हिलमिल कर प्रेम भाव से रहते थे।

समाप्त